Inspira-Journal of Commerce, Economics & Computer Science (JCECS)
ISSN : 2395-7069, Impact Factor: 4.964, Volume 06, No. 03, July-September, 2020, pp. 23-26

प्राचीन काल में शिक्षा का विकास एवं प्राचीन शिक्षण केन्द्र

डॉ. अजय कृष्ण*

प्रस्तावना

प्राचीन काल से लेकर आजतक भारत में अध्यापन पुण्य का कार्य काना गया है। गृहस्थ ब्राह्मण के पांच महायज्ञों में ब्रह्म यज्ञ का महत्वपूर्ण स्थान है। ब्रह्मयज्ञ में विद्यार्थियों को शिक्षा देना प्रधान है। इस यक्ष का संपादन करने के लिए प्रत्येक विद्वान गृहस्थ के साथ कुछ शिष्यों का होना आवश्यक था। इन्हीं शिष्यों में आचार्य के पुत्र भी होते थे। आचार्य का घर ही विद्यालय था। इस प्रकार के विद्यालयों का प्रचलन वैदिक काल में विशेष रूप में था।

प्राचीन काल में विद्यालयों की स्थिति साधरणतः नगरों से दूर वनों में होती थी। कभी–कभी विद्यालयों के आस–पास छोटे गाँव भी बस जाते थे। विद्यालय तो वैदिक काल में वही हो सकते थे, जहाँ आचार्य की गौओं को चराने के लिए घास का विस्तृत भू–भाग हो, हवन की समिधा वन के वृक्षों से मिल जाती हो और स्नान करने के लिए निकट हीकोई सरोवर या सरिता हो। तत्कालीन विद्यार्थी जीवन में ब्रह्मचर्य और तप का सर्वाधिक महत्व था। ब्रह्मचर्य और तक के लिए नगर और ग्राम से दूर रहना अधिकार उपर्युक्त है। उपनिषदों मं ब्रह्म ज्ञान की शिक्षा देने वाले ऋषियों की आवास भूमि अरण्य को ही बताया गया है। इन्हीं ब्रह्म ज्ञानियों के समीप तत्कालीन सपर्वोच्च ज्ञान के अधिकारी पहुंचते थे। अरण्य में रहना ब्रह्मचर्य का एक पर्याय समझाजाने लगा था।[2] आरम्भ में शिक्षण केन्द्र गुरू के आश्रम तक ही सिमटे हुए थे। जबकि बाद में वे वृहद विश्वविद्यालय के रूप में परिवर्तित होते चले गये।

प्राचीन काल में शिक्षा के अनेक केन्द्र थे जिनमें गुरूकुल अथवा आचार्यकुल, बिहार राज्य संरक्षण प्राप्त शिक्षा के केन्द्र इत्यादि थे। वैदिक काल में तीन प्रकार की शिक्षण संस्थाओं का उल्लेख मिलता है जिनमें पहला गुरूकुल के नाम से जाना जाता था। इस प्रकार का शिक्षण संस्थान गुरू का घर होता था। गुरूकुल शिक्षा का महत्वपूर्ण केन्द्र था। यहाँ छोटे उम्र से ही बालक शिक्षा प्राप्त करने आते थे। किन्तु इससे पूर्व उस बालक का उपनयन संस्कार अनिवार्य था। उपनयन संस्कार के बाद गुरूकुल में शिक्षा ग्रहण का निर्देश दिया गया था।

प्रारंभिक शिक्षण संस्थान का प्रतिनिधित्व आचार्य ही करते थे। आचार्य अपने गुरूकुल के सर्वेसर्वा होते थ्रो। महाभारत के अनुसार एक आचार्य भारद्वाज का आश्रम गंगा द्वार में था (हरिद्वार) में था। इस विद्यालय में वेदन वेदांगों के साथ अस्त्र–शस्त्र की शिक्षा भी दी जाती थी। अग्निवेश्य और द्रोणाचार्य को इस आश्रम में आन्येयशास्त्र की शिक्षा मिली थी। कई राजकुमार भी इस आश्रम में धुर्वेद की शिक्षा लेते थे। राजा द्रुपद ने इसी आश्रम में द्रोण के साथ धनुर्वेद की शिक्षा पायी थी। महेन्द्र पर्वत पर परशुराम के आश्रम के भीद्रोण ने अध्ययन किया था। परशुराम ने प्रयोग, रहस्य और उपसंहार विधि के साथ–साथ सभी अस्त्र–शस्त्र की शिक्षा द्रोणाचार्य को दी थी।

* पूर्व शोधार्थी, समाज विज्ञान संकाय, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार।

महर्षि व्यास का आश्रम हिमालय पर्वत पर बदरी क्षेत्र में था। आश्रम रमणीय था, इस आश्रम में व्यास वेदाध्यापन करते थे। पर्वत पर अनेक देवर्षि रहा करते थे। इसी आश्रम में सुमंतु वैशम्पायन, जैमिनि तथा पैल वेद पढ़ते थे। जिस वन में महर्षि कण्व का आश्रम था, उसकी चाता मनोहारिणी थी। ऊँचे वृक्षों की छाया सुखदायनी थी। कण्व के इस आश्रम में न्याय तत्व, आत्म विज्ञान, मोक्ष शास्त्र, तर्क व्याकरण छन्द, निरूक्त आदि विषयों के प्रसिद्ध आचार्य थे। लोकायतिक भी वहाँ अपना व्याख्यात देते थे आश्रम में जो यज्ञ होते थे उनके सभी विद्वानों और क्रिया–कलापों के लिए आचार्य नियत थे।

रामायण के अनुसार प्रयोग में गंगा यमुना के संगम के निकट भरद्वाज ऋषि का आश्रम था। आचार्य भारद्वाज शिष्यों से घिरे रहते थे। अध्ययन–अध्यापन और आवास के लिए पर्णशालायें बनी थी।

दण्डकारण्य में महिघ्र अगस्त्य का आश्रम था। आश्रम में आचार्य अगस्त्य शिष्यों से परिवृत थे। यहाँ गुरू नये विद्यार्थियों का चुनाव करते थे और फिर वे उसे अपने घर के सदस्य के रूप में अपना लेते थे, और वह शिष्य अपने गुरू के घर में गुरू की सेवा करते हुए शिक्षा प्राप्त करता था। आचार्य अपने इस शिष्य से किसी तरह का कोई शुल्क नहीं लेते थे।

छान्दयोग्य उपनिषद् से ज्ञात होता है कि अरूण (उद्दालक अरूणि) का पुत्र श्वेतकेतु था। उसके पिता ने कहा, हे श्वेतकेत, तु गुरूकुल में जाकर ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्या ग्रहण कर। हे सौम्य तुम्हारे कुल में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होगा जो अध्ययन न करें और स्वयं ब्राह्मण न बन कर, उसके समान हो जो केवल ब्राह्मणों को अपना कर बन्धु बतलाता हो। वह 12 वर्ष की अवस्था में गुरू के पास गया और सभी वेदों को बढ़कर 24 वर्ष होने पर अपने को विद्वानों और अभिमानी समझते हुए उदण्ड भाव से घर वापस आया। उसके पिता ने कहा– ''हे सौम्य श्वेतकेतु तू जो ऐसा अभिमानी, अपने को विद्वान समझने वाला और उदण्ड हो रहा है, सो क्या तुने गुरू से उस आदेश तत्व ज्ञानोपदेश को भी पूछा है जिससे अश्रोत श्रोत हो जाता हैं श्वेतकेतु ने जिज्ञासा की ''भगवन यह तत्व ज्ञानोपदेश कैसा है उसे आप मुझे बतलाइये। इस उदाहरण से स्पष्अ है कि गुरूकुल में निवास करके ज्ञान और शिक्षा प्राप्त की जाती थी।

आचार्य के पास जब विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के निमित जाता था जब आचार्य उससे पूछता था कि तुम किसके ब्रह्मचारी हो। तब आचार्य कहते थे'' नहीं तुम इनका ब्रह्मचारी हो। पहले अग्नि तुम्हारा आचार्य है बाद में हम। ''विद्यार्थी का दायाँ हाथ ग्रहण कर आचार्य उसे शिष्य के रूप में स्वीकार करते हुए कहता था, '' मैं सविता की आज्ञा से तुम्हें शिष्य के रूप में स्वीकार कर रहा हूँ। तदन्तर विद्यार्थी के हृदय पर अपना हाथ रख कर आचार्य यह कहता था, ''तुम्हारे और हमारे बीच सर्वदा प्रेम और, विश्वास रहे।

उपनिषदों में गुरूकुलों के स्थान पर आचार्य कुल का प्रयोग किया गया है। कुल शब्द अतयन्त सार्थक एवं सारगर्भित था। शिष्य अपने माता पिता के कुल से आचार्य कुल में जाकर आचार्य में पितृबुद्धि और आचार्य पत्नी में मातृ बुद्धि की भावना भरता तथा पारिवारिक वातावरण का अनुभव करता है। आचार्य कुलवासी अन्तेवासी जैसे शब्दों के साथ–साथ ब्रह्मचर्यवासी का भी उल्लेख हुआ है। कृष्ण और बलराम ने संदीपनी मुनि के आश्रम में शिक्षा ग्रहणकी थी। कच ने शुक्राचार्य के काल में विद्या अर्ज किया था।

गोष्ठियाँ

यह तीसरे प्रकार की शिक्षण संस्थान थी। यह संस्थान उन दोनों संस्थानों से भिन्न थी। ये गोष्ठियों कभी–कभी बड़े–बड़े राजाओं द्वारा आमंत्रि.त की जाती थी। ये राजा राष्ट्रीय स्तर पर सभी या गोष्ठियां संपन्न कराते थे। इन सभाओं में विभिन्न राज्यों के बड़े–बड़े विद्वानों तथा विभिन्न गुरूकुलों और परिषदों के ज्ञानियों को आमंत्रित कियाजाता था। जहाँ इन विद्वानों के बीच तरह तरह के विचारों का आदान–प्रदान और प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम होते थे।

परिषद

परिषद एक अन्य प्रकार का शिक्षण केन्द्र था। इसका उद्देश्य और कार्यप्रणाली गुरूकुल से अलग थी। यह संस्था विद्वानों और धार्मिक लोगों की होती थी। गौतम ने कहा कि परिषद में कम से कम दस सदस्य होते थे इनमें चार वेद रके पंडित होते थे, जो वेद का अध्ययन करते थे, तीन सदस्य वे थे जिनमें एक विद्यार्थी दूसरा गृहस्थ तीसरा तपस्वी होता था और शेष तीन सदस्य कानून के ज्ञाता होते थे। वाष्ठि और वौधायन की दृष्टि से पहल मीमांसा का ज्ञाता और तीसरा धार्मिक ग्रन्थ का ज्ञाता हो।

इसी प्रकार कालान्तर में आंशिक परिवर्तन होते–होते शिक्षण केन्द्र का स्वरूप भी काफी परिवर्तित होता गया और बौद्ध और जैनकाल आते–आते शिक्षण केन्द्र अपना वृहद आकर ले लिया और विद्यालय और विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाने लगा।

चूंकि बौद्ध जैन काल में भी गुरूकुल और आचार्यकुल की व्यवस्था थी लेकिन अब विश्वविद्यालयों औरविद्यालयों में कुछ प्रसिद्ध विश्वविद्यालय हुये जो आज कि लिये भी आदर्श कहे जा सकते है। इनमें कुछ विश्वविद्यालयों का संक्षिप् विवरण निम्नलिखित है।

नालंदा

बौद्ध काल में नालंदा विश्वविद्यालय का विकास आरंभ हुआ। बिहार में नालंदा राजगीर के समीप का एक गाँव था। महावीर ने भी यहाँ चौदह वर्ष व्यतीत किये । नालंदा काफी धनी और समृद्ध क्षेत्र था। यहाँ बहुत दूर–दूर से विद्यार्थी पढ़ने के लिये आया करते थे। नागार्जुन औरआर्यदेव नालंदा विश्वविद्यालय के शोधार्थी थे। नालंदा मुख्यतः बौद्ध शिक्षा का केन्द्र था। भारत के अलावें अन्य देश जैसे चीन, तिब्बत आदि से भी विद्यार्थी यहां शिक्षण ग्रहण करने आते थे। यह भारत का नहीं बल्कि विश्व का सबसे बड़ा शिक्षण–केन्द्र था। फाह्यिान ने नालंदा के बारे में वृहद वर्णन किया है। इस शिक्षण संस्थान के सर्वेसर्वा कुलपति कहलाते थे। यहाँ विद्यार्थियो की संख्या दस हजार थी। नालंदा विश्वविद्यालय में शिक्षकों की संख्या एक हजार पाँच सौ दस थी। वहाँ ऐसे शिक्षक एक हजार थे जो बीस सूत्रों और शात्रों के ज्ञाता थे। पाँच सौ शिक्षक ऐसे थे जो तीस विभिन्न विषयों में दक्ष थे। दस शिक्षक ऐसे थे जो पचास विषयों के ज्ञानी माने जाते थे। यह पूरी संस्थ शिक्षा में अनोखी और सुव्यस्थित थी। प्रतिदिन एक सौा विभिन्न विषयों में व्यायान किये जाने थे। सभी विद्यार्थी अनुशासित ढंग से विद्या ग्रहण करते थे। सभी शिक्षकों की रहने की व्यवस्था विश्वविद्यालय द्वारा विश्वविद्यालय क्षेत्र में ही की जाती थी। यहाँ नियमित कक्षाओं की व्यवस्था थी। इसी तरह विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के लिये निमित स्नान और भोजन की व्यवस्था थी। भोजन के समय घंटी बजती थी जिससे विद्यार्थी स्वयं भोजन के लिये निर्दिष्ट स्थान पर पहुंच जाते थें इस तरह नालंदा की शिक्षा व्यवस्था अत्यन्त ही सुव्यवसिति समृद्ध और पूर्ण तकनीक से युक्त थी।

तक्षशिला

तक्षशिला महाविद्यालय या विश्वविद्यालय महाभारत काल से ही सारे उत्तर भर में प्रख्यात था। यहीं पर आचार्य धौम्य के शिष्य उपमन्यु, आरूणी ने वेद की शिक्षा पायी थी। जातक कथाओं के अनुसार तक्षशिला में शिक्षा पाने के लिये काशी, राजगृह, पंचाल, मिथिला और उज्जयिनी से विद्यार्थी जाते थे। गौतम बुद्ध के समकालीन वैधराज जीवक के तक्षशिला में सात वर्षो तक आयुर्वेद की शिक्षा पायी थी। आचार्य पाणिनि और कौटिल्य को भी सम्भवतः तक्षशिला में शिक्षा मिली थी। सिकंदर के समय तक्षशिला उच्च कोटि के दर्शन के विद्वानों के लिए प्रसिद्ध थी। तक्षशिला मे वेदों की शिक्षा प्रधान रूप से दी जाती थी, पर साथ ही प्रायः सभी विद्यार्थियों को कुछशिल्पों में विशेष योग्यता प्राप्त करनी पड़ती थी। विद्यालय में जिन अठारह शिल्पों की शिक्षा दी जाती थी, उनकी गणना इस प्रकार है– चिकित्सा (आयुर्वेद), शल्य, धनुर्वेद, हस्तिसूत्र, ज्योतिष, व्यापार, कृषि संगीत नृतय कला, चित्रकला, इन्द्रजाल, गुप्तकोश ज्ञान, मृगया, अंगविधा, पशु–पक्षी की बोली समझना, निमित ज्ञान, विषोपचार इत्यादि

तक्षशिला में उच्च शिक्षा की ही व्यवस्था थी। यहाँ सभी वर्ग के लोगों के लिए शिक्षा के लिए द्वार खुला था। लेकिन शुद्र को यह सुअवसर प्राप्त नहीं था। एक उदाहरण ऐसा मिलता है जिसमें बनारस के राजा के पुत्र राजकुमार ब्रह्मदत्त शिक्षा अध्ययन के लिए अपने पिता का आज्ञा पालन करते हुये तक्षशिला जाता हैं राजा अपने पुत्र को इस अवसर पर एक सहस्र स्वर्ण मुद्राये और जीवनोपयोगी महत्वपूर्ण सामाग्री देकर विदा करते हैं। राजकुमार जब तक्षशिलाा जा कर शिक्षक से मिलता है तो वह सभी सामग्री और स्वर्ण मुद्राये अपने गुरू के चरणों में अर्पित कर देता है और उसमें से अपने निजी खर्च के लिए कुछ भी नहींरखता है तथा स्वं अपने को गरीब ब्राह्मण शिष्यों के साथ उनकी जैसी स्थिति में रहकर विद्याध्ययन करता हैं इस उदाहरण से यह स्पष्ट है कि उस समय में विद्यालयों में शिक्षा शुल्क की व्यवस्था थी।

तक्षशिला एक बड़ा शिक्षण केन्द्र था, जहाँ देश के विभिन्न भागों से विद्यार्थी अध्ययन के लिए आते थे। तक्षशिला का नाम वहाँ के शिक्षण संस्थाओं के शिक्षक के विद्वता के कारण ही फला था। वहाँ के शिक्षक विश्व के विख्यात शिक्षकों में गिन जाते थे। ये शिक्षक अपने विषय के प्रकाण्ड पंडित होते थे। तक्षशिला में देश के विभिन्न भागों में ब्राह्मण युवक शिक्षा देने की कला सिखने के लिये आते थे। तक्षशिला विश्वविद्यालय द्वारा देश के विभिन्न भागों में शिक्षण संस्थाओं को मान्यता प्राप्त थी।

बौद्ध काल में इस तरह के शिखण संस्थाअें के अतिरिक्त कुछ विशेष समुदाय के लिए भी शिक्षण संस्थान की व्यवस्था थी। जिसमें शिक्षक के साथ 500 विद्यार्थी रह सकते थे तथा शिक्षक केवल ब्राह्मण एवं क्षत्रिय होते थे।

उस समय वरीय विद्यार्थी सहायक शिक्षण का कार्य करते थे जिन्हें वहाँ के कर्मचारियों द्वारा सहायता मिलती थी। इस कार्य में बहुत तेज और बुद्धिमान शिष्यों का ही चुनाव होता था, वहीं सहायक शिक्षक नियुक्त होते थे। इस तरह हम पाते है कि तक्षशिला शिक्षण केन्द्र के रूप में काफी विकसित और आदर्श केन्द्र था। इनके बहुत सारे नियम आज भी अनुकरणीय है।

काशी

इस युग में काशी भी भारतीय विद्याओं की शिक्षा के लिए प्रसिद्ध थी। जातक मकथाओं के अनुसार बैधिसत्व के आचार्य होने पर उनके 500 विद्यार्थी थे, जो वैदिक साहित्य का अध्ययन करते थे। बोधिसत्व के विद्यार्थी में 100 राज्यों से आये हुये क्षत्रिय और ब्राह्मण कुमार शिक्षा पाते थे। काशी के समीप परर्तीकाल में सारनाथ में बौद्ध दर्शन का महान विद्यालय प्रतिष्ठित हुआ। इसमें 1500 बौद्ध भिक्षु शिक्षा प्राप्त करते थे।

इस तरह हम पाते है कि वैदिक काल से लेकर बौद्ध काल तक शिक्षण केन्द्र में क्रमशः विकास होता गया और ये जनकल्याणकारी सिद्ध होते गये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- ✓ निरूक्त, 1.4
- ✓ कठोपनिषद, 11.9 मु0 उ0, 1.3.3
- ✓ महाभारत, उद्योगपर्व, 44.6
- ✓ विष्णु पुराण, 5–21.4
- ✓ जातक 5, पृ0 263, 3, पृ0 238, 5, पृ0 247, 127
- ✓ मनु स्मृति, 69.25–47

❑❑❑